अध्याय : पाँच

नारी चेतना

नारी संपूर्ण मानव सौंदर्य एवं चेतना की उत्कृष्ट अभिव्यक्ति है । साथ ही साथ सृष्टि का मूल भी । साहित्य की हर एक विधा की सृष्टि में नारी हृदय की पुलक, उसकी अनुरक्ति एवं जीवनदायिनी शक्ति निहित होती है । आचार्य हज़ारीप्रसाद द्विवेदी जी ने नारी की महत्वपूर्ण सृष्टि का वर्णन करते हुए कहा है कि "पुरुष स्वभावत: नि:संग व तटस्थ होता है, नारी ही उसमें आसक्ति उत्पन्न कर उसे नव निर्माण के प्रति उन्मुख करती है । पुरुष अपनी परुष प्रकृति के कारण द्वन्द्व रहित हो सकता है । लेकिन नारी अतिशय भावुकता के कारण सदैव द्वन्द्वोन्मुखी रहती है । इसलिए पुरुष मुक्त है और नारी बद्ध ।"[1]

आदिकाल में नारी की समस्त मानसिक, वैचारिक तथा शारीरिक चेतनाओं को केवल पुरुष के मनोरंजन एवं उपभोग के लिए ही दिया गया था । उस काल में नारी केवल परावलंबी, असहाय और पुरुष पूरक के रूप में मानी जाती थी । मनुस्मृति में स्त्री के विषय में इस प्रकार कहा गया है कि

---

1. डा. हजारीप्रसाद द्विवेदी - बाणभट्ट की आत्म कथा - पृ. 110

"पिता रक्षति कौमार्ये भर्ता रक्षति यौवने ।
वार्द्धक्ये रक्षति पुत्रः न स्त्री स्वातंत्र्यं अर्हति ।।"

स्त्री को केवल भोग, सन्तान एवं रसोई घर के कोल्हू में डालकर पूरी तरह जोत दिया गया था । इस प्रकार प्राचीन काल में नारी की अवस्था अत्यन्त दर्दनाक थी । वह पूर्ण रूप से परंपरा की बेडी में जकड गयी थी । भारतीय नव जागरण के समय नारी के उद्धार की दिशा में परिवर्तन होने लगा । उसे पुरुषों के साथ समानता दिलाने के लिए अनेक जन-नेताओं ने प्रयत्न किया । राजा राममोहन राय, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, महर्षि दयानन्द सरस्वती, स्वामी विवेकानन्द, महादेव गोविन्द रानाडे, पंडिता रमाबाई, महात्मा गाँधी तथा श्रीमती एनी बेसेंट आदि महात्माओं ने सदियों से कुप्रथाओं, रूढियों तथा अन्यायों में फँसी भारतीय नारी को सर्वप्रथम शिक्षित करके समाज में उचित स्थान देने को तथा अधिकार प्राप्त करने को अथक परिश्रम किया । स्त्री को समाज में उचित स्थान देने को इन महानुभावों ने जो कार्य किया है, वह अत्यन्त महत्वपूर्ण है ।

स्वामी विवेकानन्द ने स्त्री को एक आदर्श माता के रूप में प्रतिष्ठित किया था । वे मानते थे कि जो जाति स्त्री का आदर सम्मान करना नहीं चाहती तो वह जाति न अतीत में उन्नति कर सकी, न भविष्य में उन्नति कर सकेगी । वे स्त्री को जीवन का

प्रेरणा-स्रोत मानते थे । उनका विश्वास था कि "जब तक स्त्रियों की हालत सुधारी नहीं जाएगी तब तक संसार में समृद्धि की कोई संभावना नहीं है । पक्षी एक पंख पर कभी नहीं उड पाता ।"[1] वे सदैव यह उपदेश देते थे कि स्त्री बंधनों से मुक्त होने के लिए सदैव प्रयत्नशील रहे ।

महात्मा गाँधीजी भी स्त्री की यह दुरवस्था देखकर दुखी थे । उन्हें विश्वास था कि "स्त्रियों के मामले में यदि पुरुष हस्तक्षेप न करे तो वे अपनी समस्याएँ स्वयं आसानी से सुलझा सकेंगी क्योंकि स्त्रियों में बुद्धि और कर्तव्य शक्ति होती है ।"[2] वे यह भी कहते थे कि स्त्रियों को अब जागना चाहिए और सावधान होना चाहिए । उन्हें यह दृढ निश्चय कर लेना चाहिए कि हम पुरुष की वासना तृप्त करने का साधन नहीं है ।

गाँधीजी की राय यह थी कि स्त्री पुरुष की गुलाम नहीं, अपितु सहधर्मिणी और मित्र है । उनका यह भी कहना था कि स्त्री अहिंसा की मूर्ति है । इसलिए भविष्य का निर्माण उसके हाथों में है । इसलिए गाँधीजी स्त्रियों के उद्धार के लिए सदैव प्रयत्न करते रहे ।

---

1. Swami Vivekanand - Thoughts of Power - P.36

2. गाँधी साहित्य - भाग 1 - पृ. 152

पंडिता रमाबाई अपने जीवन के अंतिम क्षण तक स्त्री उत्थान के लिए प्रयत्नशील थी । वे बाल विवाह, विधवा विवाह निषेध तथा सती प्रथा आदि अनेक कुप्रथाओं और रूढियों का खण्डन और इन्हें समाप्त करने के लिए प्रयत्नशील रही । उन्होंने कहा है, "स्त्रियों को सिर्फ साक्षर ही नहीं बल्कि सुविज्ञ होकर पुरुषों की बराबरी में सामाजिक, राजनीतिक और धार्मिक कार्य करना होगा । यह पाप नहीं है बल्कि यह उनका अधिकार है । नारियों की दशा सुधारने में वे अंत तक प्रयत्नशील बनी रहती ।"[1]

पश्चिमी विदुषी श्रीमती एनीबेसेंट जब भारत आई तब भारतीय नारी की दशा देखकर द्रवित हुई और भारत में रहकर स्त्री की दशा सुधारने के कार्य में प्रवृत्त हुई । उन्होंने "स्त्री की शिक्षा पर अधिक ध्यान दिया और उसे राष्ट्रीय विचार-धारा के मूलभूत आधार का स्थान प्राप्त करा दिया ।"[2] इसी प्रकार एनीबेसेंट बाल विवाह के विरुद्ध और विधवाओं के पुनर्विवाह के पक्ष में थी ।

---

1. प्रबोधनकार - के.सी.ठाकरे - "पंडिता रमाबाई सरस्वती" - पृ.22
2. The national movement for the education of girls must be one which meets the national needs, and India needs nobly trained wives and mothers, wise and tender rulers of the household, educated teachers of the young, helpful Councellors of their husbands, skilled nurses of the sick, rather than girls graduates, educated to the learned professions- Annie Besant - For India's uplift - P.73

इबिड ने कहा है स्त्री तथा पुरुष के परस्पर प्रेम, सहकारिता आदि में उनका पूरा विश्वास था जिससे प्राचीन भारत की उज्वल परंपरा को वे पुनरूजीवित करना चाहती थी ।"[1]

नारी जीवन की अनेक समस्याओं, विषमताओं तथा जटिलताओं का विश्लेषण प्रेमचन्द तथा प्रेमचन्दोत्तर युगीन उपन्यासों में हुआ है । आधुनिक युग के बदलते संदर्भों एवं नारी

---

1. If you care for the India of the future, the India of which you and I are dreaming, remember that, that India cannot be made by bodies that are nervous Wrecks; by men who grow old before their time; and for India's sake save the girls and boys and let them marry in full age; restoring Aryan marriages, men and women joining hands in love and honour, that is the marriage plead with you, to restore and I believe you will, because you come of a noble stock.
Ibid - P.76

उत्थान की नव चेतनता के फलस्वरूप इन उपन्यासकारों ने नारी के अस्तित्व का मौलिक अन्वेषण अपने उपन्यासों में करने का प्रयत्न किया है । वे इस प्रकार जान गए हैं कि "पुरुष कुछ नहीं बनाता - बिगाडता, सब कुछ स्त्री ही बनाती है । धर्म स्त्री पर टिका है, सभ्यता स्त्री पर निर्भर है - दुनिया स्त्री पर टिकी है, जो आँखों से देखते हैं, चुपचाप इस तथ्य को स्वीकार कर दबके बैठे रहते हैं, ज्यादा चूं नहीं करते ।"[1]

नागार्जुन के उपन्यासों में विधवाओं का मार्मिक चित्रण हुआ है । इन विधवा स्त्रियों में "रतिनाथ की चाची" की गौरी, दमयंती, सुमित्रा, चंद्रमुखी, सुशीला, "बलचनमा" की बलचनमा की माँ तथा दादी, "नई पौध" को रामेसरी एवं वाचस्पति की माँ, "दुखमोचन की मामी एवं माया, "कुंभीपाक" की भुवन और चंपा, उग्रतारा की उगनी, उल्लेखनीय हैं ।

पीडित एवं शोषित नारी

गौरी (रतिनाथ की चाची), बलचनमा की माँ और दादी (बलचनमा), उगनी (उग्रतारा), भुवन और चंपा (कुंभीपाक) पार्वती (पारो) आदि पीडित एवं शोषित नारियों का प्रतिनिधित्व

---

1. बांके बिहारी भटनागर (संपा. जैनेन्द्र) व्यक्ति ,कथाकार और चिंतक - पृ. 89-90

करती हैं । सामाजिक शोषण की तीव्र ज्वाला में जलती हुई नारियाँ विद्रोह के लिए तड़प उठती हैं । ये नारियाँ "पुरुषों की दूषित यौन वृत्ति, सामाजिक रूढ़ियों और सामंती अत्याचारों की शिकार हैं । चाहे युवावस्था का वैधव्य हो या वेश्यावृत्ति का कुंभीपाक, अपनी निजी यातना के माध्यम से वे इस तथ्य को भली भाँति समझती हैं कि आर्थिक निर्भरता ही उन्हें इस अमानवीय नरक से बाहर निकाल सकती है ।"[1]

नागार्जुन ने रतिनाथ की चाची में सामाजिक विषमता और स्वार्थपरता ने गौरी के जीवन को अधिक से अधिक दयनीय बना दिया है । जयनाथ ने अपनी विधवा भाभी को कामुकता का शिकार बनाकर गर्भिणी बना लिया है । गौरी अपना रोष इस प्रकार प्रकट करती है - "किसी भी युग में स्त्री को अमृत पीने का सुयोग अवसर नहीं मिला । पुरुष को अमृत पिलाकर स्वयं वह विषपान करती आयी हैं । जाने दो तुम यह सब क्या समझोगे ?"[2]

"पारो" उपन्यास में नायिका पार्वती का विवाह पैंतालीस वर्ष की गुलहाई चौधरी के साथ हो गया है । चौधरी की दृष्टि में स्त्री के लिए धन ही सबकुछ है । लेकिन पार्वती की कहना है

---

1. मधुरेश - नागार्जुन के उपन्यास - {आलोचना-22 जुलाई-सितंबर 1972} - पृ. 55
2. नागार्जुन - रतिनाथ की चाची - पृ. 97-98

कि "हे भगवान लाख दंड दे मगर फिर औरत बनाकर इस देश में जन्म नहीं दे ।" नारी हृदय की संपूर्ण व्यथा उपर्युक्त शब्दों में अभिव्यक्त हुई है ।

"कुंभीपाक" की चंपा अपने पति की मृत्यु के उपरांत अपने जीजा से अवैध संबंध स्थापित करती है । चंपा समाज द्वारा शोषित एवं पीडित होकर अत्यन्त दारूण नारकीय जीवन भोगने को विवश होती है । उन्होंने ये विचार अपने उग्रतारा उपन्यास में व्यक्त किये हैं - "लुच्चे-लफंगे अपना ही मुँह काला करते हैं । हमारा-तुम्हारा मुँह तो शीशे से भी ज्यादा साफ रहेगा ।"[1]

नागार्जुन के उपन्यासों में पीडित, शोषित नारी पात्रों का चरित्र विकास जीवन के यथार्थ धरातल पर हुआ है । मधुरेश के शब्दों में -"नागार्जुन के पुरूष पात्रों की अपेक्षा स्त्री पात्र अपनी अपनी मिट्टी और परिवेश के प्रति अपेक्षाकृत और भी सच्चे हैं ।"[2]

विद्रोही नारी

नागार्जुन के उपन्यासों में कुछ विद्रोही नारियों को महत्वपूर्ण स्थान मिला है । इसमें गौरी (रतिनाथ की चाची),

---

1. नागार्जुन - उग्रतारा - पृ. 42
2. मधुरेश - नागार्जुन के उपन्यास - आलोचना जुलाई-सितंबर 1972 - पृ. 55

माया (दुखमोचन), बिसेसरी (नई पौध), नीरू (कुंभीपाक) और माधुरी (वरूण के बेटे) आदि प्रमुख हैं । इन नारियों ने समाज में व्याप्त रूढ़ियों अत्याचारों के विरूद्ध आवाज़ उठायी हैं । रूढ़िवादी समाज में पली गौरी अंत में साम्यवादी चेतना से प्रभावित प्रतिबद्ध नारी के रूप में प्रकट हो गयी हैं ।

प्रतिबद्ध चेतना के उपन्यासकार नागार्जुन अपने समाज में अमूलचूल परिवर्तन लाना चाहते हैं । इसलिए उन्होंने विद्रोही पात्र माया के द्वारा समाज में व्याप्त रूढ़ियों के विरूद्ध आवाज़ उठायी है । नागार्जुन से निरूपित नीरू ऐसी नारी का उदाहरण है । नीरू एक ऐसी पात्र है जो समाज में व्याप्त वेश्यावृत्ति के समूल परिवर्तन के लिए कृतसंकल्प है । वे स्त्रियाँ अंधविश्वास, रूढ़ियों और अविवेक के कारण कुंभीपाक में नरक तुल्य जीवन व्यतीत कर रही हैं । लेकिन नीरू अपनी विद्रोह चेतना जागृत कर उनसे मुक्ति पाना चाहती है । उसने कुंभीपाक से भुवन का उद्धार किया है और साथ ही साथ चंपा का भी उद्धार करना चाहती है ।

स्वाभिमानी नारी

नागार्जुन के उपन्यासों में दर्शित अधिकांश नारियाँ शोषण व अन्याय के विरूद्ध आवाज़ उठाते हुए अपनी स्वाभिमानी व्यक्तित्व की छाप दूसरों पर छोड जाती हैं । स्वाभिमान उनके जीवन

की एकमात्र धन है । इस मामले में गौरी (रतिनाथ की चाची), बलचनमा की माँ (बलचनमा), हरखू की माँ (नई पौध) और मधुरी (वरूण के बेटे) अत्यन्त तीखी स्वाभिमानी नारियाँ हैं । "रतिनाथ की चाची" गौरी को एक बार उसकी माताजी ने मायके में रहने का प्रस्ताव किया । इस पर रूष्ट होकर उसकी प्रतिक्रिया है कि "बाबू", (पिता) ने कुश-तिल-जल लेकर मुझे दान कर दिया, फिर मेरा इस घर में रहना अनुचित नहीं होगा माँ ? विवाहिता के लिए पितृकुल का अमृत भी पतिकुल का माँड या पीने के साधारण जल की तुलना में तुच्छ हैं । माँ, तभी तो तुम ने अपनी नानी के घर पर लात मार दी थी । "है न माँ ?"[1] यह गौरी की स्वाभिमानी चेतना का प्रतीक है ।

बलचनमा की माँ (बलचनमा) अत्यन्त स्वाभिमानी है । वह वैधव्य और गरीबी की परवाह न कर स्वाभिमान से अपना जीवन व्यतीत कर रही है । वह अपनी और बेटी की इज्जत बेचने को तैयार नहीं है । वह ज़मीन्दार द्वारा किये गये सारे जुल्मों को सहन करती थी । लेकिन इज्जत बेचने को तैयार नहीं है । वह अपना रोष प्रकट कर अपने पुत्र बलचनमा से कहती है -"बबुआ बालचन । मर जाना लाख गुना अच्छा है मगर इज्जत का सौदा करना अच्छा नहीं है ।"[2] बलचनमा अपनी माँ की इस कथन का पालन आजीवन करता है और ज़मीन्दार के आगे अपना सिर कभी नहीं झुकाता ।

---

1. नागार्जुन - रतिनाथ की चाची - पृ. 28
2. नागार्जुन - बलचनमा - पृ. 79

हरखू (दुखमोचन) की माँ के चरित्र में भी यह स्वाभिमान की भावना विद्यमान है । वह गरीबी में अपना जीवन व्यतीत कर रही है । दुखमोचन उसे राहत स्वरूप सहायता में अनाज देता है । लेकिन वह दुखमोचन से कहती है -"यह अनाज वापस रख लीजिए । यह मामूली गेहूँ नहीं है कि आसानी से हजम होगा । धर्म का अनाज है मालिक । अब इस वक्त मैं झूठ कैसे कहूँ कि हमारे घर में कुछ नहीं है । पचीस रूपया है हाथ पर, दो पौने दो मन गेहूँ हुआ सरकार । तो झूठ मूठ मैं कैसे कहूँ कि छटांक भर भी दाना नहीं है घर में ।"[1] ईमानदारी और स्वाभिमान का इस से अधिक समर्पित व्यक्तित्व हिन्दी उपन्यास साहित्य में नहीं मिलता ।

पार्वती (पारो) उपन्यास की नायिका स्वाभिमान का मूर्तिरूप है । अनमेल विवाह से पीडित होकर भी मृत्यु में ही वह सभी प्रकार के कष्टों का अंत देखती है । मधुरी (वरूण के बेटे) का चरित्र भी स्वाभिमान से परिपूर्ण है । वह किसी भी प्रकार का अत्याचार सहन नहीं करती । वह शराबी ससुर के व्यवहार सहन करने को तैयार नहीं है । वह उस घर को छोडकर अपने पिता के साथ रहकर समाज सेवा करती हुई शेष जीवन यापन करती है । निष्कर्ष स्वरूप कहा जा सकता है कि उपन्यासकार के मन में नारियों की स्वाभिमान के प्रति बहुत बडा लगाव है ।

---

1. नागार्जुन - दुखमोचन - पृ. 50

उदात्त एवं उच्च आदर्शों से प्रेरित नारी

"रतिनाथ की चाची" की गौरी का चरित्र अत्यंत उदात्त और उच्च आदर्शों से प्रेरित है । गौरी के चरित्र में मातृत्व की भावना झलकती है । उसका स्वाभाविक वर्णन इस प्रकार हुआ है - "उसकी आँखों में छलकते वात्सल्य के तरल रूप को देखकर रतिनाथ का चेहरा खिल उठता है ।"[1] रतिनाथ द्वारा चाची के प्रति होनेवाले ये शब्द अत्यन्त मार्मिक है - "ऐसा लगता है कि दिन-ब-दिन तुम देवता होती चली जा रही हो ।"[2]

दुखमोचन की शशिकला मामी की सेवा और त्याग मनोभाव दूसरों के लिए अनुकरणीय है । वह घर के हर एक व्यक्ति की सेवा करती है और दुखमोचन को माता के रूप में प्यार भी देती है ।

"वरुण के बेटे" की मधुरी एक समाजसेवी नारी के रूप में प्रकट होती है । वह सेवा, त्याग और परोपकार का साकार मूर्ति है । "नई पौध" की वाचस्पति की माँ का चित्रण उल्लेखनीय है । उसके मन में अपने पुत्र के लिए ही नहीं अपितु समस्त पुत्रों के लिए भी अमिट वात्सल्य का स्रोत है । नागार्जुन के अधिकांश नारी पात्र इस प्रकार उदात्त एवं आदर्शों से प्रेरित है ।

---

1. नागार्जुन - रतिनाथ की चाची - पृ. 150
2. वही - पृ. 96

पारिवारिक जीवन में नारी का स्वरूप

परिवार समाज की श्रेष्ठतम इकाई है । व्यक्ति अपने जन्म से लेकर अंतिम समय तक समाज से जुडा रहता है । देशकाल की परिवर्तनशील परिस्थितियों के आधार पर परिवार के आकार, प्रकार में परिवर्तन होता रहता है । नागार्जुन के उपन्यासों का वर्ण्य विषय मिथिला जनपद है । अपने उपन्यासों में दीर्घकाय परिवारों का चित्रण किया है । "रतिनाथ की चाची" में रतिनाथ के नाना पाँच भाई थे । अपने और चचेरे कुल मिलाकर सत्रह मामा थे । बारह मौसियाँ थीं । चौदह मामियाँ थीं । सचमुच उसका मातृकुल, बहुत विशाल था ..... बाल बच्चे, नौकर-चाकर मिलाकर तिरसठ प्राणियों का परिवार था ।"[1]

नारी जीवन से संबंधित पारिवारिक जोवन के अंतर्गत माँ-सन्तान, बहिन-बहिन, बहिन-भाई, पति-पत्नी, सास-बहु भाभी-ननद आदि का वर्णन गंभीरतापूर्वक किया है । माँ और बच्चे का संबंध अटूट होता है । माता के मन में सदा ही बच्चों का लालन-पालन, शिक्षा-दीक्षा आदि की चिन्ता रखती है । माता अपने को दुख भोगती है और पुत्र को सदा ही सुख पहुँचाने की चेष्टा करती है । माँ और बच्चे के संबंध को दो रूपों में बाँटा जा सकता है ।

---

1. नागार्जुन - रतिनाथ की चाची - पृ . 138-139

माँ-बेटा

नागार्जुन ने अपने औपन्यासिक कृतियों में माँ-बेटे के संबंधों का चित्रण किया है । गौरी और उमानाथ (रतिनाथ की चाची), बिरजू और उसकी माँ गुह्येश्वरी (पारो) बलचनमा और उसकी माँ (बलचनमा) आदि का चित्रण मार्मिक ढंग से किया है । माता के रूप में गौरी स्नेह और सहिष्णुता की मूर्ति है । जयकिशोर की विधवा माँ ने नाना प्रकार को कठिनाईयों को झेलते हुए अपने पुत्र का पालन पोषण कर उसे बडा किया है । जयकिशोर के मन में अपनी माता के प्रति समर्पण का भाव है, ममता है । वह कहता है -"ऐसी माँ और किसकी होगी ? कभी किसी काम के लिए मुझे नहीं कहा । मैं राजकुमार की तरह रह आया हूँ । हाथ से कदाचित् ही एक तिनका भी उठाना पडा हो ।"[1] माता और पुत्र का अटूट संबंध अत्यन्त सहज और स्वाभाविक है ।

"पारो" उपन्यास की नायिका पार्वती के मामा के पुत्र बिरजू अपनो माता के साथ आत्मीय संबंध स्थापित किया है । गुह्येश्वरी ने अनेक प्रकार के दुखों को सहते हुए अपने बेटे को बडा ही किया है ।

---

1. नागार्जुन - रतिनाथ की चाची - पृ. 114

"बलचनमा" उपन्यास में माँ और बेटे के संबंध का चित्रण यथार्थवादी धरातल पर है । जमीन्दार के क्रूर हाथों से अपनी बेटी की रक्षा करते हुए माँ कहती है -"बबुआ बलचन । मर जाना लाख गुना अच्छा है । मगर इज्जत का सौदा करना अच्छा नहीं । यह माता की कष्टतापूर्ण जोवन और स्वाभिमान का प्रतीक है । यह कथन पुत्र को प्रेरणा देती है और वह अपना सिर आगे ऊँचा करके कहता है - "बहुत बडे भागवंत को हो ऐसी माँ मिलती है भैया । मैं ने भी यह ठान लिया कि चाहे उजड जाना पडे, चाहे जहल-दामुल हो, चाहे फँसी चढूँ, मगर कभी जालिम के सामने सिर नहीं झुकाऊँगा ।" इस प्रकार बलचनमा के व्यक्तित्व निर्माण का श्रेय अपनी माता को ही है ।

माँ-बेटी

नागार्जुन के उपन्यासों में गौरी और उसकी माँ {रतिनाथ की चाची}, बिसेसरी और उसकी माँ रामेश्वरी {नई पौध} रेबनो और उसकी माँ {बलचनमा} माया और उसकी माँ {दुखमोचन}, पार्वती और उसकी माँ {पारो} आदि अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं उल्लेखनीय हैं ।

नागार्जुन के उपन्यासों में माता-पुत्री के स्वाभाविक, स्निग्ध संबंध को प्रकट करनेवाले कई मार्मिक प्रसंग मिलते हैं । उदाहरण

---

1. नागार्जुन - बलचनमा - पृ. 79

के रूप में "रतिनाथ की चाची" में गौरी विधवा हो जाने पर अपने देवर जयनाथ से गर्भधारण कर लेती है । अपनी माता के प्रति होनेवाली दृढ विश्वास और संकल्प के कारण वह तरकुलता जाती है और माँ के ममतापूर्ण व्यवहार के कारण गर्भ को यातना से मुक्ति पा जाती है । यह दृष्टान्त माँ और बेटी के अटूट संबंध और आत्मीयता का द्योतक है ।

"नई पौध"की रामेश्वरी ने ममता का मक्खन और स्नेह की सुधा पिलाकर बिसेसरी को बड़ा किया है ।"[1] बलचनमा की रेबनी नायक बलचनमा की बहन है । गरीबों की अस्मत लूटना जमीन्दारों के लिए एक साधारण काम है । लेकिन रेबनी की माँ का व्यवहार अनुकरणीय है । माँ के चारित्रिक गुणों ने अपनी पुत्री को चरित्रवान एवं परिश्रमी बना लिया है ।

दुखमोचन उपन्यास की माया की माँ विधवा विवाह एवं अन्तर्जातीय विवाह के विरुद्ध आवाज़ उठाते हुए भी अपनी पुत्री के मंगलमय भविष्य के लिए कपिल के साथ विवाह की अनुमति दे देती है ।

"पारो" उपन्यास की पार्वती अनमेल विवाह से दुखी है । माँ अपनी बेटी को कुछ न कुछ देने को सदैव लालायित

---

1. नागार्जुन - नई पौध - पृ, 7

होती है । उसकी माँ का कथन है कि -"मेरी क्या दूसरी तीसरी बेटी है ? न बड़िसाति देखूँगी और न मधुश्रावणी और बेटो को बिदाई कर दूँ ।"[1] उपन्यासकार नागार्जुन ने माँ-बेटो के आत्मीयतापूर्ण व्यवहार का सोधा-सादा वर्णन अत्यन्त मार्मिक ढंग से किया है ।

बहिन-बहिन

नागार्जुन के उपन्यास "नई पौध" में बहिन के संबंधों का मार्मिक चित्रण मिलता है । नई पौध की रामेसरी, महेसरी, भुवनेसरो, गुनेसरी, वानेसरी और धनेसरी सात बहिनें हैं । धन को लालसा में पडकर पिता अपनो बेटी को बेचने केलिए तैयार है । रामेसरी को छोडकर छहों पुत्रियों को उसने बेच डाला । रामेसरी को अपनी बहिनों से प्यार है और दूसरों के दुख में दुखी होकर रोतो रहतो है । "रामेसरी अपने अभाग पर उतना कभी नहीं रोई जितना कि बहिनों की बदनसीबी पर रोती रहती थी ।"[2]

बहिन-भाई

बहिन और भाई का स्नेह अत्यन्त गहरा और प्रेम सात्विक है । नागार्जुन ने गौरी और जयकिशोर (रतिनाथ की चाची)

---

1. नागार्जुन - पारो हिन्दी रूपान्तर कुलानंद मिश्र - पृ. 43
2. नागार्जुन - नई पौध - पृ. 6

रेबनो और बलचनमा {बलचनमा} माया और जयमाधव {दुखमोचन} दिगम्बर और शकुन्तला {नई पौध} और बिरजू और अर्पणा {पारो} आदि भाई-बहनों के संबंध को उजागर कर दिया है । "रतिनाथ की चाची" का जयकिशोर जब गाँव आता है तब बहन गौरी के गर्भधारण का समाचार सुना तो, उसे मानवीय कमज़ोरी समझकर अपनी बहन से घृणा नहीं करता ।

"पारो" उपन्यास की पार्वती और चुल्हाई का संबंध अनमेल विवाह के कारण है । पारो के जीवन का असन्तोष इन शब्दों से व्यक्त हुआ है -"मगर जिसे कुछ भी कहने का हक नहीं है उसके लिए जैसा पैंतीस वर्षों का वर वैसा ही पैंतालीस वर्षों का । लंगडा रहे या काना, कोढ़ी रहे या पगला, बूढ़ा हो या प्रौढ़-पति साक्षात् परमेश्वर होता है । यह शिक्षा तो अपने यहाँ छुटपन से औरतों को मिलती है ।"[1]

नई पौध के वाचस्पति और बिसेसरी आधुनिक प्रगतिशील चेतना के प्रतीक है । "दुखमोचन" उपन्यास में कपिल और माया का दांपत्य जीवन प्रगतिशील चेतना के कारण व्यवहारवादी है । ये दोनों पति-पत्नी समाजोत्थान के प्रति समर्पित है । नागार्जुन के उपन्यासों में वर्णित पति-पत्नी संबंध अनमेल विवाह की उपज है ।

---

1. नागार्जुन - पारो - पृ. 50

पति पत्नी

पति पत्नी संबंध परिवार का मुख्य आधार है । यह संबंध मानव जीवन का सबसे अधिक श्रेष्ठ एवं रोचक संबंध ही है । नागार्जुन के उपन्यासों के अधिकतर नारी पात्र अनमेल विवाह के दुष्परिणाम के शिकार चित्रित हैं । उनके उपन्यासों के कथ्य में अनमेल विवाह की समस्या महत्वपूर्ण है । नागार्जुन की मधुरी (वरूण के बेटे) और उगनी ही उसके अपवाद है । मधुरी अपने पति को छोडकर मायके लौट आती है ।

"रतिनाथ की चाची" में गौरी के पिता कुलीनता के मोह में पडकर वैद्यनाथ झा के साथ उसका विवाह कर दिया । वैद्यनाथ झा के बारे में उपन्यासकार का कथन महत्वपूर्ण है । दूसरे दम्पति जयनाथ और उसकी पत्नी है । जयनाथ को अपनी पत्नी के साथ संबंध तनावपूर्ण है । तीसरे दम्पति जयकिशोर और उसकी पत्नी का दाम्पत्य जीवन सहज स्नेहमय और अटूट आत्मीयता से पूर्ण है ।

नागार्जुन के उपन्यास "उग्रतारा" की उगनी और "वरूण के बेटे" की मधुरी ऐसी ही नारियाँ हैं जो विवाह संबंधी समस्यायें प्रस्फुटित करती हैं । उगनी अपने पति भभीखनसिंह को त्यागकर अपने प्रेमी कामेश्वर के साथ चली जाती है । उनके अधिकांश उपन्यासों में वर्णित पति-पत्नी संबंध कुलीनता के मोह में अनमेल विवाह की परिणति है ।

सास - बहू

नारी के पारिवारिक संबंधों में सास-बहू का चित्रण अत्यन्त महत्वपूर्ण है । रतिनाथ की चाची को गौरी और उमानाथ की पत्नी कमलमुखी के बीच में कटु एवं तनावपूर्ण व्यवहार है । जब सास वृद्धावस्था में है तब बहू के मन में सास के प्रति उपेक्षाभाव पनप कर देता है । अगर पुत्र अपनी माँ की उपेक्षा करने लगता है तो बहू को भी सास के प्रति उपेक्षाभाव करने की स्वतंत्रता प्राप्त हो जाती है ।

सहज, स्वाभाविक, आत्मीय सास-बहू के संबंधों का उदाहरण है, "बलचनमा" उपन्यास की सुगनी और उसकी सास, बलचनमा की माँ और उसकी सास, रतिनाथ की चाची का जयकिशोर की पत्नी और उसकी माँ "नई पौध" में बिसेसरी और उसको सास आदि ।

भाभी - देवर

"रतिनाथ की चाची" में वर्णित भाभी-देवर संबंध हिन्दी साहित्य में व्यापक संवेदना जागृत करने में सफल हुआ है । विधवा गौरी अपने देवर जयनाथ द्वारा असह्य मानसिक पीडा सहन करती हुई भी जयनाथ और उसके पुत्र रतिनाथ के प्रति अपने कर्तव्यपालन से विचलित नहीं हो पायी है ।

दुखमोचन में शशिकला और लीलाधर देवर-भाभी हैं । विधवा शशिकला और विधुर लीलाधर के बीच एक परिपक्व आत्मीय संबंध स्थापित होता है जो किसी भी प्रकार के स्वार्थ की गंध से दूर है ।

नई पौध में टुनाई और उसकी भाभी समाज में व्याप्त एक कुप्रथा अनमेल विवाह का विरोध करती हैं ।

भाभी-ननद

नागार्जुन के उपन्यासों में भाभी-ननद का चित्रण भी मिलता है । पारो की माँ और गुह्येश्वरी (पारो) रेबनी और उसकी भाभी सुगनी (बलचनमा), गौरी और उसकी भाभी जयकिशोर की पत्नी (रतिनाथ की चाची) आदि अत्यन्त उल्लेखनीय हैं ।

अन्य संबंध

केवल चाची-भतीजा का संबंध "रतिनाथ की चाची" में प्राप्त होता है । मातृहीन और पिता द्वारा प्रताडित रतिनाथ अपनी माँ के अभाव की पूर्ति चाची द्वारा करता है । गौरी की अंतिम इच्छा है कि उसका अंतिम संस्कार रतिनाथ ही करे -"वह मेरा मानस

पुत्र है - ..... चाची, पता नहीं, माँ कैसी हुआ करती है । मगर मेरे लिए तुम्हीं माँ हो, हो न चाची ।"[1] नागार्जुन के औपन्यासिक कृतियों में नारी के पारिवारिक जीवन का चित्रण मिथिला और दरभंगा जनपद की यथार्थ धरातल पर ही हुआ है ।

अनमेल विवाह

नागार्जुन ने अपने उपन्यासों में अनमेल विवाह को समस्या को एक मानवीय दृष्टिकोण से देखा है और इसके निराकरण के लिए प्रगतिशील समाधान भी प्रस्तुत करने की चेष्टा की है । रतिनाथ को चाची का भोला पंडित और नई पौध का खोखा पंडित अनमेल विवाह के शिकार है । "कितने ही लूले, लंगडे, अंधे, अपाहिज और बूढे भोला पंडित की कृपा से अधखिली कलियों जैसी बालिकाओं को गृहलक्ष्मी के रूप में पाकर निहाल हो गये । एक एक ब्याह में पचास रूपये पंडितजी के बंधे हुए थे ।"[2]

"खोखा पंडित (नई पौध) अपनी विधवा बेटी रामेसरी की पुत्री बिसेसरो का विवाह साठ वर्षीय चतुरा चौधरी से तय कर देते हैं । चौधरी पाँचवीं बार दुल्हा बन गये हैं ।"[3]

---

1. नागार्जुन - रतिनाथ की चाची - पृ. 149
2. वही - पृ. 70-71
3. नागार्जुन - नई पौध - पृ. 5

परिणामस्वरूप कोई वृद्ध और रूग्ण व्यक्तियों के साथ हुई किशोरियों में से "कोई अपने पूर्व प्रेमी के साथ भाग जाती है और कोई विधवा होने के उपरान्त घर में ही व्यभिचारिणी बनकर लांछन और अपमान का जीवन व्यतीत करती रहती है ।"[1]

"पारो" उपन्यास की नायिका पार्वती के दुखद जीवन का कारण अनमेल विवाह है । पैंतालीस वर्षीय खुसर चुल्हाई चौधरी से अनमेल विवाह होने के कारण पार्वती का जीवन असन्तुष्ट रहता है । "ज़ोर जबरदस्ती कोई किसी के शरीर पर ही कर सकता है । मन पर कतई नहीं । आप ही कहिए जहाँ पैंतालीस वर्ष के वर की पत्नी पन्द्रह साल की होती हो, वहाँ सौमनस्य कैसे संभव है ?"[2]

दुखपूर्ण जीवन की यातना सहन करते हुए वह भगवान से प्रार्थना करती है कि लाख दंड दें मगर फिर औरत बनाकर इस देश में जन्म नहीं दें ।"[3] पार्वती के द्वारा युगों से पुरूष द्वारा पीडित नारी की करूण कथा का अंकन होता है ।

---

1. विश्वंभर मानव - हिन्दी साहित्य का सर्वेक्षण (गद्य खण्ड) - पृ. 70
2. नागार्जुन - पारो - पृ. 82
3. वही - पृ. 50

"रतिनाथ की चाची" का भोला पंडित एक ऐसा चरित्र है जो पचास-पचास रुपयों के लिए किशोरी बालिकाओं के जीवन से अनमेल विवाह कराकर सन्तुष्ट हो जाता है । "पचीसों लडकियाँ इनके नाम पर दिन-रात आँसू बहाया करती थीं । उनकी ज़िन्दगी नष्टप्राय हो गयी थी ।"[1]

"नई पौध" में उपन्यासकार प्राचीन भारतीय परंपरा की एक ज्वलन्त समस्या को चित्रित करता है । उसका हल भी विकासशील युगीन परंपरा के अनुरूप ही है ।

"उग्रतारा" को उगनी भभीखनसिंह के साथ अनमेल विवाह कराकर विवाह के समय किये गये प्रण को भूलकर असवर्ण जाति के कामेश्वर के साथ अन्तर्जातीय विवाह सूत्र में बद्ध हो जाती है ।

नागार्जुन ने अनमेल विवाह की समस्या को "पारो", "रतिनाथ की चाची", "नई पौध", "उग्रतारा" आदि उपन्यासों में विभिन्न स्थानों में प्रस्तुत किया हैं । अनमेल विवाह की शिकार किशोरियों के प्रति पाठक के मन में संवेदना उत्पन्न करने में उपन्यासकार को पूर्ण रूप से सफलता मिली है । उपन्यासकार मानता है कि इस प्रकार की कुप्रथा को दूर करना अत्यन्त आवश्यक है ।

---

1. नागार्जुन - रतिनाथ की चाची - पृ. 7।

वैधव्य जीवन

नारी के प्रति होनेवाली धारणा यह है कि यदि नारी विधवा हो, तो उसकी नियति अभिशप्त जीवन बिताना है । भारतीय समाज में वैधव्य एक अभिशाप है । धर्म और शास्त्र के अनुसार हिन्दू स्त्री विधवा हो जाए तो उसे कठिन संयम का पालन करना चाहिए । वैधव्य जीवन के संबंध में ईश्वरचन्द्र विद्यासागर ने बंगाल में तथा जस्टिस रानडे और नटराज ने बंबई में विधवा विवाह का प्रश्न उठाया । इन महानुभावों के प्रयत्न के फलस्वरूप विधवा-विवाह जायज स्थापित किया गया । लेकिन भारतीय समाज प्राचीन परंपराओं और रूढ़ियों को तोडने में असमर्थ निकल पडता है । आधुनिक युग में भी भारतीय समाज में विधवा का जीवन अत्यन्त शोचनीय है ।

नागार्जुन के उपन्यासों में "रतिनाथ की चाची", "बलचनमा", "नई पौध", "दुखमोचन" और "उग्रतारा" में विधवा जीवन का मार्मिक वर्णन हुआ है । "रतिनाथ की चाची" की गौरी का वैधव्य, दरिद्र कुल में लडकी ब्याह ने का ही यह दुष्परिणाम है ।"[1] "भारतीय विधवा नारी के प्रति जो करुणा, संवेदना तथा सहानुभूति चाची समेट चुकी है, वह हिन्दी उपन्यासों में कोई विधवा नहीं पा सकी ।"[2]

---

1. नागार्जुन - रतिनाथ की चाची - पृ. 25
2. डा. चण्डीप्रसाद जोशी - हिन्दी उपन्यास समाज शास्त्रीय विवेचन - पृ. 366

गौरी के पिता ने कुलीनता के मोह में पडकर अपनी लडकी का विवाह वैधनाथ झा के साथ किया था । देवर जयनाथ अपनी काम वासना का शिकार गौरी को बनाया है । और वह गर्भवती हो गयी है । गौरी को असहाय अवस्था का उपहास हो नहीं बल्कि उसके सामाजिक बहिष्कार का उपक्रम होता है । "उमानाथ की माँ व्यभिचारिणी है, पतिता है, भ्रष्टा है, कुलटा है, छिनाल है, उससे हमें किसी प्रकार का संबंध नहीं रखना चाहिए । बोलचाल बंद, बात-विचार बंद । प्रत्येक व्यवहार बंद..... उमानाथ की माँ को समाज किसी भी हालत में क्षमा नहीं कर सकता ।"[1]

गौरी की माँ विधवा थी, लेकिन वह धन संपन्न थी । गाँववाले उसे लोहा मानते थे -"गौरी की माँ समाज के लिए बाघिन थी । इतना बडा कुकांड हो जाने पर भी तरकुलवा में किसी ने गौरी की माँ से खुल्लम-खुल्ला कुछ कहा नहीं ।"[2]

"बलचनमा उपन्यास में बलचनमा की माँ छोटे मालिक ज़मीन्दार को रेबनी का शील भंग नहीं करने देती ।"[3] पीछे उसने आँसू भरी आँखों से रो रोकर बताया था -"बबुआ बालचन । मर जाना लाख

---

1. नागार्जुन - रतिनाथ की चाची - पृ. 65-66
2. वही - पृ. 58
3. नागार्जुन - बलचनमा - पृ. 78-79

गुना अच्छा है । मगर इज्जत का सौदा करना अच्छा नहीं ।"[1] माँ के इस करूण क्रन्दन से "बलचनमा" में स्वाभिमान जागृत हो गया और वह आशावादी दृष्टि से स्थितियों को देखने लगता है ।

"दुखमोचन" में नागार्जुन ने माया और कपिल का अंतर्जातीय विधवा विवाह संपन्न करवाकर विधवा समस्या का हल भी प्रस्तुत किया है । "उग्रतारा" की उगनी विधवा होती हुई भी भभीखनसिंह के साथ दुखद जीवन बिताना नहीं चाहती थी । वह कामेश्वर के साथ विवाह करती है । नागार्जुन ने यथार्थवादी दृष्टि से नारी पात्रों का अंकन किया है ।

वेश्या जीवन

वेश्या समस्या के प्रमुख कारण हैं आर्थिक अभाव, सामाजिक संरक्षण का अभाव, असंगत वैवाहिक पद्धति तथा विभिन्न प्रकार की मनोवैज्ञानिक जटिलताएँ हैं । नागार्जुन वेश्या समस्या की मूल जड़ें समाज में व्याप्त घोर आर्थिक विषमता समझते है । गर्लिन स्पेंसर का यह कथन -"मानव प्रगति के लिए आदिम शत्रु लोभ एवं वासना एवं मानव प्रगति के आदिम व्यवधान, अज्ञान और आलस्य, आत्मरति, दंभ और नैतिक उत्तरदायित्व का अभाव - सदा की भाँति आज भी

---

1. नागार्जुन - बलचनमा - पृ. 78-79

सामाजिक बुराइयों के यही कारण हैं । किन्तु फिर भी वेश्यावृत्ति आदि युग से लेकर आज तक अधिकांशत: एक आर्थिक, समस्या ही रही है ।"[1] समाज में व्याप्त शोषण का सब से घृणित और बीभत्स रूप वेश्यावृत्ति है ।

कुंभीपाक में वेश्या जीवन का यथार्थ चित्रण मिलता है । भुवन की बुआ चम्पा के भुवन को लिखे ये शब्द -"घबड़ाकर शादी न कर लेना भुवन, न किसी आश्रम में भर्ती होना । मुझे लगता है कि तुम समाज की इस सड़ांध से - इस कुंभीपाक नरक से - निकलकर नयी दुनिया के समझदार लोगों के बीच पहुँच गयी हो..... वहाँ जहाँ के नर नारी मिल जुलकर आगे बढ़ते हैं, जहाँ कोई किसी की बेबसी का फायदा नहीं उठाता, कोई किसी को चकमा नहीं देता, जहाँ पुरुष बल होगा तो स्त्री बुद्धि होगी, स्त्री शक्ति होगी तो पुरुष ज्ञान । भुवन तुम निश्चय ही उसी संसार में पहुँच गयी हो ।"[2] इससे स्पष्ट होता है कि नागार्जुन का दृष्टिकोण वेश्या समस्या के प्रति भावुकता पूर्ण न होकर अधिक से अधिक वैज्ञानिक और यथार्थपरक है ।

बहु विवाह

नागार्जुन के प्रसिद्ध उपन्यास रतिनाथ की चाची और

---

1. गार्लिन स्पेंसर - विमेन्स शेयर इन सोशल कलचर का हिन्दी अनुवाद - पृ. 122
2. नागार्जुन - कुंभीपाक - पृ. 112

पारो उपन्यास में बहु विवाह की समस्या पर विस्तार से विचार किया गया है । "रतिनाथ की चाची के नाना की दस विमाताएँ थीं । जयनाथ के परदादा ने इक्कीस शादियाँ की थीं । तिब्बत में जैसे बहुपति-प्रथा अभी तक जायज और जीवित है ।"[1]

कभी कभी कुलीन कन्या का मोह बहु विवाहों का कारण होता है -"मेवालाल ठाकुर बडहइवा के बहुत बडे काश्तकार थे । पचास वर्ष की उम्र में उन पर यह सनक सवार हुई कि किसी कुलीन कन्या का पाणिग्रहण करना चाहिए । दो शादियाँ इससे पहले की थीं । वे दोनों औरतें मौजूद थीं । उनमें से एक के चार और दूसरी के सात सन्तानें थीं ।"[2]

"भोला पंडित ने भी पुत्र-प्राप्ति की इच्छा से पैंतालीस वर्ष की उम्र में दूसरी शादी की थी । पहली स्त्री अभी तक मौजूद थी और दोनों आपस में मुर्गियों की तरह लडती रहती थी ।"[3] पारो उपन्यास के घटक लूच झा ने भी दो शादियाँ कीं । पार्वती भी अपने पति चुलहाई चौधरी से सन्तुष्ट संबंध स्थापित नहीं कर सकती थी । अंत में देखा जा सकता है कि केवल तेरह वर्ष की लडकी मानसिक और

---

1. नागार्जुन - रतिनाथ की चाची - पृ. 130-131
2. वही - पृ. 75
3. वही - पृ. 61

शारीरिक यातनाओं से मुक्ति मृत्यु में प्राप्त करती है । उसका पति स्वयं की इच्छा न होते हुए भी पुनः विवाह के लिए बाध्य हुआ । "सुनने में आया है कि चौधरी जी ने इसी वैशाख में फिर शादी की है ..... अपनी इच्छा नहीं थी..... मगर ममेरे भाई का आग्रह.... तब करते भी क्या ।"[1]

नागार्जुन ने मिथिला के ब्राह्मण परिवारों में प्रचलित बहु विवाह का चित्रण यथार्थवादी ढंग से किया है ।

नारी शिक्षा

आधुनिक युग में नारी शिक्षा का बहुत बडा महत्व है । नारी के उत्थान के संदर्भ में नारी शिक्षा की आवश्यकता पर अधिक बल दिया है । नागार्जुन के उपन्यासों का अधिकांश पात्र मिथिला जनपद का ग्रामीण अंचल का है । वहाँ की अधिकतर नारियाँ सुशिक्षित नहीं है । नागार्जुन की इसी धारणा को बलचनमा का नायक बलचनमा इस प्रकार व्यक्त करता है -"जब लडकियाँ भी लडकों की तरह पढी-लिखी होने लगेंगी तभी इस मुल्क का उद्धार होगा ।"[2]

"वरूण के बेटे" की मधुरी राहत कार्य से संबंधित

---

1. नागार्जुन - पारो - पृ. 94
2. नागार्जुन - बलचनमा - पृ. 132

मलाही गोदियारी गाँव में होनेवाले सभी कार्यों में पढ़ी लिखी लडकियों के साथ प्रवृत्त हुई । उग्रतारा के नर्मदेश्वर की भाभी भी एक पढ़ी लिखी नारी के रूप में प्रकट होती है । वह वैधव्य की अभिशाप से संतप्त उगनी के मन को कामेश्वर की ओर उन्मुख कराती है । और वह पुनः एक संतुष्ट जीवन व्यतीत कर सकी । यह सब तो नारी को शिक्षित होने का परिचायक है ।

नागार्जुन का दृढ़ विश्वास है कि शिक्षा के द्वारा ही नारी समाज में सम्मानित स्थान प्राप्त कर सकेगी । उनके उपन्यास "उग्रतारा" की नायिका उगनी शिक्षा के महत्व को स्पष्ट करती हुई कहती है -"तीसरी आँख होती है विद्या, समझी ।"[1]

नागार्जुन का संकल्प है कि शिक्षित नारी ही राजनीति के महत्व को समझ सकती है । और उसमें ठीक तरह से सक्रिय भाग भी ले सकती है । पारो उपन्यास में देश की शिक्षित महिला-रत्नों..... सरोजिनी नायडू, विजयलक्ष्मी पंडित और कमला चट्टोपाध्याय का उदाहरण देते हैं ।"[2] उनकी राय है कि स्त्री कहलाने की अधिकारिणी वही नारी है जो शिक्षित हो । इस विचार का ठीक समर्थन उनके उपन्यास पारो की नायिका पार्वती करती है -"जो स्त्री पढ़ी लिखी नहीं, वह स्त्री कहलाने के योग्य नहीं है ।"[3]

---

1. नागार्जुन - उग्रतारा - पृ. 55
2. नागार्जुन - पारो - पृ. 62
3. वही - पृ. 62

निष्कर्ष रूप में कहा जाता है कि नागार्जुन के नारी पात्र अधिक शिक्षित न होने पर भी अत्यन्त जागरूक और सचेत है ।

नारी समानता

नागार्जुन नारी समता के प्रबल पक्षधर हैं । सन् 1920 के असहयोग आन्दोलन के बाद भारत में एक नवीन सामाजिक और राजनीतिक चेतना का उदय हुआ । देश स्वतंत्र होने के पश्चात् सामाजिक व्यवस्था में एक बडा परिवर्तन हुआ । नागार्जुन के अधिकांश नारी पात्र अपने अधिकारों के प्रति सचेत हैं । उनके "कुंभीपाक" नारी समानता का उद्घोषक बनकर हमारे सामने आता है । भुवन से चंपा का कथन - "घबडाकर शादी न कर लेना भुवन, न किसी आश्रम में भर्ती होना मुझे लगता है कि तुम इस सडाँध से ..... इस कुंभीपाक नरक से निकलकर दुनिया के समझदार लोगों के बीच पहुँच गयी हो..... वहाँ जहाँ नर-नारी मिल जुलकर आगे बढ़ते हैं, जहाँ कोई किसी की बेबसी का फायदा नहीं उठाता, कोई किसी को चकमा नहीं देता, जहाँ पुरुष बल होगा तो स्त्री बुद्धि होगी, स्त्री शक्ति होगा तो पुरुष ज्ञान, भुवन तुम निश्चय ही उस संसार में पहुँच गयी हो ।"

युग युग को रूढ़ियों से जकडी हुई नारी के उत्साह को बढ़ाते हुए रायसाहब का यह कथन -"बस बस, यही आत्म विश्वास

महिलाओं में देखना चाहता हूँ । हम बडी जातवालों ने महिलाओं को पंगु बना रखा है । जीवन का सारा रस निचोडकर सीठी बनाकर छोड दिया है । श्रम, प्रज्ञा, सहयोग, विवेक और सुरुचि सभी आवश्यक है - चंपा, जीवन में इन पौधों का समन्वय करना होगा । पुरुषों की बपौती नहीं है । स्त्रियों का भी साझा है उनमें ।"[1] समाज के विभिन्न क्षेत्रों में नारी जाति के बढ़ते हुए महत्व और प्रभाव दिखाई पडता है ।

"नई पौध" में बिसेसरी के संबंध में दिगम्बर का यह कथन - "बिसेसरी बडी समझदार और बहादुर लडकी है । बोझा बनकर तुम्हारी गर्दन नहीं तोडेगी वह । साथ रखोगे और माकूल ट्रेनिंग दोगे तो अच्छी से अच्छी साथिन बनेगी ।"[2] नागार्जुन की औपन्यासिक कृतियों में नारी समानता के महत्व को अनेक स्थानों में रेखांकित किया गया है ।

नारी - स्वातंत्र्य

नागार्जुन नारी स्वातंत्र्य एवं समानाधिकार के पक्षधर हैं । उनका नारी का वह स्वरूप परंपरागत नारी से भिन्न है । "वरुण के बेटे" उपन्यास में माधुरी अपने ससुर के व्यवहार से तंग आकर एवं अपने पति से सुरक्षा न मिलने पर मायके वापस आती है । मायके लौट

---

1. नागार्जुन - कुंभीपाक - पृ. 112
2. नागार्जुन - नई पौध - पृ. 117

आकर वह पूर्ण रूप से राजनीति के आन्दोलनों में भाग लेती है । मजिस्ट्रेट के पूछने पर वह उत्तर देती है कि -"तो इसमें क्या दर्ज है हुज़ूर । जिनगी और जहान औरतों के लिए नहीं है क्या ।"[1] माधुरी का यही भाव आगे किसानों को ज़मीन्दारों के शोषण से मुक्त कराने में सहायक सिद्ध होती है ।

नागार्जुन का विश्वास है कि जब नारियों को साथ लेकर आगे चलें तब देश की उन्नति हो जाएगी । नागार्जुन नारी के अपना वर स्वयं चुनने के अधिकार के प्रति सजग है । यह उनके प्रगतिशील दृष्टिकोण का द्योतक है । "हीरक जयन्ती" में ललनजी का अपनी पत्नी से यह कथन - "पढ़ लिखकर काम करेंगी, आप अपना दुल्हा खोज लेंगी ।"[2] उनके विचार से स्पष्ट होता है कि नारी शिक्षा, नारी समानता एवं स्वातंत्र्य नारी उन्नति के पूरक हैं ।

नारी और राजनीति

1947 की आज़ादी के पहले के वामपंथी राजनीतिक तथा साहित्यिक प्रगतिवादी आन्दोलन में बुद्धिजीवियों की विस्तृत प्रतिबद्धता की आवाज़ चारों ओर गूँज उठती थीं क्योंकि राजनैतिक धुरी

---

1. नागार्जुन - वरुण के बेटे - पृ. 124
2. नागार्जुन - हीरक जयन्ती - पृ. 92

शहर केन्द्रित थी । लेकिन 1950-1960 के संक्रांति काल के बाद ग्राम केन्द्रित धुरी पर तेज़ी से राजनीति फैली । नागार्जुन के नारी पात्र तत्कालीन राजनीति से प्रभावित है और वे राजनीतिक आन्दोलनों में भाग लेती हुई गिरफ्तार भी हो जाती हैं । "वरुण के बेटे" की माधुरी ज़मीन्दारों के विरुद्ध आवाज़ उठाते हुए दिखाई पडती है । वे कहती है कि - "इंकलाब ज़िन्दाबाद, मछुआ संघ ज़िन्दाबाद..... हक की लडाई जीतेंगे, जीतेंगे..... गढ पोखर हमारा है, हमारा है ।"[1] आदि नारे लगाते हुए देखी जा सकती है ।

वरुण के बेटे की शन्नी, भाभी, अर्पणा और हेम आदि नारियाँ राजनीतिक आन्दोलनों में पूरी तरह भाग लेकर तीन प्रमुख प्रस्ताव पास करती है । ये प्रस्ताव इस प्रकार है -

(1) किसान तकावी की रकम अपनी सुविधा के अनुसार लौटायेंगे ।

(2) सम्मेलन में जमीन्दारों को आगाह किया गया कि वे युग की आवाज़ को अनसुनी न करें ।

(3) "मलाही गोंढियारी के मछुआरों को गरोखर से मछलियाँ निकालने के पुश्तैनी हकों से वंचित करने का कोई भी साजिश कामयाब नहीं होगी ।"[2]

---

1. नागार्जुन - वरुण के बेटे - पृ. 127
2. वही - पृ. 107

नई पौध की बिसेसरी एक ओर साम्यवादी दल में भाग लेती है तो दूसरी ओर मधुरी साम्यवादी दल की सदस्या है । रतिनाथ की चाची की गौरी रूस की राजनीति से अत्यधिक प्रभावित होकर कहती है -"मैं पढ़ी लिखी नहीं हूँ, मगर इतना समझती हूँ कि रूसवालों ने अपने यहाँ जो नया संसार बसाया है उसके अन्दर जाकर राक्षसों की बड़ी से बड़ी फौज भी मात जा जायेगी ।"[1] इस प्रकार नागार्जुन के नारी पात्रों में न केवल बौद्धिक स्तर पर राजनीतिक चेतना का विकास हुआ है । वरन् ये नारी पात्र पुरुषों की भाँति राजनीति में सक्रिय भाग लेने में समर्थ हैं ।

नारी और आर्थिक स्वावलंबन

आधुनिक युग में यह विचार सर्वमान्य है कि बिना आर्थिक स्वतंत्रता के स्त्री वर्ग को पुरुष वर्ग के शोषण और दासता से मुक्ति असंभव है ।

समाज में आर्थिक विकास और स्थायित्व ही नारी के करुण और भोग्य रूप का अंत कर उसे समाज में प्रतिष्ठा प्राप्त करने में सहायक बना सकते हैं । आर्थिक स्वावलंबन की स्थिति प्राप्त कर आज की नारी पुरुष की भाँति सभी क्षेत्रों में अपना अधिकार प्राप्त

---

1. नागार्जुन - रतिनाथ की चाची - पृ. 157

कर चुनौतियाँ दे रही हैं । नागार्जुन के नारी पात्रों को देखने पर मालूम होता है कि उनमें से अधिक नारी पात्र स्वतंत्र और स्वावलंबी बनने की चेष्टा करती हैं । वे रूढ़ियों एवं परंपराओं में जकडे हुए भी आत्म विश्वास का परिचय दिलाती हैं और श्रम पर आधारित जीवन बिताती हुई दिखाई पडती हैं ।

नागार्जुन की दृढ़ धारणा है कि आर्थिक अभाव और दारिद्र्य नारी को दूसरों के सामने अपने घुटने टेकने के लिए विवश करते हैं । वे नारियाँ आजीवन सभी प्रकार की यातनाएँ सहती हुई जीवन यापन करती हैं । नागार्जुन का उपदेश है कि नारी को गौरवपूर्ण जीवन जीने के लिए स्वयं स्वावलंबी होनी चाहिए ।

कुंभीपाक उपन्यास में भुवन वेश्या का कष्टपूर्ण जीवन बिताने के पश्चात् रत्न साहब के उपदेश से टाइप करना सीखती है । इसके पश्चात् एक टाइपराइटर खरीदती है । और काम करके सम्मान के साथ जीविका चलाती है । साथ ही साथ "गृह शिल्प कुटीर" नामक दूकान खोलकर अचार, पापड और बडियाँ बेचकर रोटी कमाती है ।

नागार्जुन श्रम मूलक समाज व्यवस्था के पक्षपाती है । "बलचनमा" उपन्यास के नायक बलचनमा नारी आर्थिक स्वातंत्र्य के विचार

को अभिव्यक्ति देता हुआ कहता है -"अपनी माँ, बहिनों और बहू बेटियों के हाथ पैर हमारे यहाँ सिर्फ छूने-मसलने या नाटाने, थिरकने का सामान नहीं हुआ करते, हमारी ज़िन्दगी का सहारा है वे हाथ पैर ।"[1] इस से स्पष्ट है कि नागार्जुन के उपन्यासों में चित्रित नारियाँ पुरुषों के समान श्रम में विश्वास रखती हैं और सम्मान के साथ जीवन यापन करना भी चाहती हैं ।

"रतिनाथ की चाची" की गौरी आजीवन दुखपूर्ण जीवन व्यतीत करके समाज की समस्त क्रूरताओं को सहन करती हुई अंत में तकली से सूत कातकर जो पैसा प्राप्त कर लेती है कि न वह स्वयं मेहनत की रोटी ही खाती है । बल्कि अपने पुत्र उमानाथ के विवाह के अवसर पर दो सौ रुपये निकालकर खर्च कर देती है । नागार्जुन के मन में नारी के प्रति उदारता और सहानुभूति हैं ।

निष्कर्ष

भारतीय समाज में पुरुष की नारी दृष्टि अब भी सहानुभूति से संपृक्त और सम्मानपूर्ण नहीं है । लेकिन नागार्जुन की नारियाँ कहीं आत्मभुक्ति के लिए सदा प्रयत्नशील हैं और एक समानान्तर संसार को सृष्टि में लगी रहती हैं । कुंभीपाक की चंपा

---

1. नागार्जुन - बलचनमा - पृ. 155

आरंभ में ही त्यागपत्र (जैनेन्द्र) की नायिका की भाँति अपने को स्वयं हमारे सामने प्रस्तुत करती है । गर्हित से गर्हित, दुर्वह से दुर्वह जीवन व्यतीत करती है । एक बार अवसर मिलने पर वे इस प्रकार के यातनापूर्ण जीवन से मुक्ति पा सकी । "वरुण के बेटे" की माधुरी कहती है -"अब वह कभी उस नशाखोर बूढ़े की लात-बात बर्दाश्त करने नहीं जाएँगी । फिर से शादी कर लेगी, किसी दिलेर-नेकचलन और मेहनतकश जवाब से..... और बगैर मर्द के कोई औरत अकेली जिन्दगी नहीं गुज़र सकती है ? क्या ?"[1]

नागार्जुन ने नारी जीवन से संबंधित अनेक समस्याओं का निरूपण तथा उसका युग सापेक्ष समाधान भी प्रस्तुत किया है । उन्होंने एक ओर नारी से संबंधित अनेक समस्यायें जैसे दहेज, बाल विवाह, अनमेल विवाह, वेश्यावृत्ति, अन्तर्जातीय विवाह, विधवा विवाह, पारिवारिक संबंध, सामाजिक स्थिति आदि का निरूपण किये हैं तो दूसरी ओर नारी के स्वाभिमान प्रतिशोध भाव, सहनशीलता, मातृत्व, ममत्व, मर्यादा और महत्ता का सजीव, सहज, स्वाभाविक चित्रण वर्णित हैं । उपन्यासकार नारी की शारीरिक पवित्रता को अधिक ध्यान न कर मन की पवित्रता पर ज़ोर दिये हैं । उग्तारा की भाभी का उगनी से यह कथन -"लुच्चे, लफंगे अपना ही मुँह काला करते हैं, हमारा-

---

1. नागार्जुन - वरुण के बेटे - पृ. 109

तुम्हारा मुँह तो शीशे से भी साफ रहेगा ।" यह वाक्य नारी की मन को पवित्रता का द्योतक है ।

नागार्जुन की धारणा है कि नारी की आर्थिक परतंत्रता हो नारी की वैयक्तिक स्वतंत्रता के मार्ग में बाधा बन पड़ी हैं । अतः उन्होंने नारी की स्वतंत्रता का समर्थन किया है । नारी के प्रति युगों से चले आ रहे पुरुषों के अत्याचार को रोककर समाज में स्त्री को उचित स्थान देने के वे प्रबल हितैषी हैं । उनका समर्थन है कि नारी समाज का अभिन्न अंग है । उनके संपूर्ण उपन्यास को देखने पर मालूम पड़ता है कि उपन्यासकार के मन में नारी के प्रति गंभीर आस्था है और इसी घनीभूत आस्था और आत्मीयता को उजागर किया है ।